# राहुल गांधी को झटका

**बसपा प्रमुख** मायावती ने छत्तीसगढ़ के बाद मध्य प्रदेश और राजस्थान के विधानसभा चुनावों में भी कांग्रेस के साथ गठबंधन न करने का एलान कर भाजपा के खिलाफ महागठबंधन बनाने की विपक्षी दलों की उम्मीदों पर पानी फेरने का ही काम किया है। मायावती का यह फैसला कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी के लिए किसी झटके से कम नहीं, जो भाजपा विरोध के नाम पर पूरे देश में विपक्षी दलों को एक साथ लाने की कोशिश कर रहे हैं। बसपा के इस फैसले के बाद अगले आम चुनाव के पहले भाजपा और विशेष रूप से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को साझा चुनौती देने की विपक्षी दलों की कोशिश के कामयाब होने के आसार और कम दिखने लगे हैं। विपक्षी दलों का महागठबंधन यदि वास्तविक आकार नहीं ले पा रहा है और अपनी विश्वसनीयता कायम नहीं कर पा रहा है तो इसके लिए उसके नेता ही जिम्मेदार हैं। विपक्षी नेता जिस महागठबंधन की बात कर रहे हैं उसने अब तक न तो कोई सार्थक एजेंडा सामने रखा है और न ही यह स्पष्ट हो सका है कि ऐसे किसी गठबंधन का नेतृत्व कौन करेगा? सबसे बड़ी समस्या तो इस गठबंधन का नेतृत्व करने की इच्छा रखने वाले कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी की ओर से खड़ी की जा रही है। वह न तो अपने दल को कोई नीतिगत दिशा दे पा रहे हैं और न ही अन्य विपक्षी दलों को। किसी विपक्षी नेता की ओर से सरकार की आलोचना और निंदा तो समझ में आती है, लेकिन निराशाजनक यह है कि कांग्रेस अध्यक्ष की ओर से कोई वैकल्पिक विचार पेश नहीं किया जा रहा है।

बसपा ने मध्य प्रदेश और राजस्थान में अकेले चुनाव लड़ने की घोषणा करते हुए जिस तरह कांग्रेस नेताओं पर अहंकारी होने का आरोप लगाया उससे विपक्ष के महागठबंधन का नेतृत्व करने की कांग्रेस की क्षमता पर नए सिरे से सवाल खड़े हो गए हैं। बेहतर हो कि कांग्रेस नेतृत्व विपक्षी दलों की एकजुटता की कोशिश करने से पहले इस पर विचार करे कि क्षेत्रीय दल उसका नेतृत्व स्वीकार करने को क्यों नहीं तैयार हैं? यह ठीक है कि कांग्रेस सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी है, लेकिन एक के बाद एक राज्यों में उसका जनाधार जिस तरह सिमटता जा रहा है उससे वह इस स्थिति में नहीं रह गई है कि उसके नेतृत्व को सभी दल अपने आप स्वीकार कर लें। जहां तक मायावती की बात है तो यह पहली बार नहीं है जब उन्होंने किसी दल से गठबंधन के संकेत देकर अपने कदम पीछे खींचे हों या किसी गठबंधन में शामिल होने के बाद बाहर आई हों। उनकी राजनीति ही इसी तरह होती रही है और वह बसपा के राजनीतिक हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देती रही हैं। फिलहाल यह नहीं कहा जा सकता कि वह अपने मौजूदा रुख पर आगे भी कायम रहेंगी। उनके जैसे राजनीतिक तौर-तरीके रहे हैं उसे देखते हुए इस बारे में कुछ भी कहना सही नहीं होगा कि वह भविष्य में, खासकर अगले साल होने वाले लोकसभा चुनाव में क्या फैसला लेंगी, लेकिन इतना अवश्य है कि तीन राज्यों में विधानसभा चुनाव के संदर्भ में उनके निर्णय के बाद कांग्रेस को अपनी रीति-नीति और तौर-तरीकों पर नए सिरे से विचार करना होगा।

# एक खिलाड़ी की पीड़ा

**जकार्ता एशियाड** की सिल्वर मेडलिस्ट सुधा सिंह की पीड़ा खेलों के विकास को लेकर शासन की नीतियों पर बड़ा सवाल है। एक तरफ सरकार घोषणा कर रही है कि ओलंपिक में मेडल जीतने वाले खिलाड़ियों को करोड़ों रुपये देकर सम्मानित किया जाएगा। दूसरी तरफ सुधा सिंह जैसी संभावनापूर्ण खिलाड़ी की अपने गृह प्रदेश लौटने की अभिलाषा को तकनीकी पेचों में उलझाकर विवाद खड़ा किया जा रहा है। सुधा सिंह अगले ओलंपिक में स्वर्ण पदक जीतने की तैयारी कर रही हैं। प्रशंसकों को भी उन पर भरोसा है। जकार्ता में वह दुर्भाग्यवश गोल्ड मेडल से चूक गईं। इसके बावजूद उनके शानदार प्रदर्शन की वजह से मुख्यमंत्री ने उन्हें खेल निदेशालय में उप निदेशक की नौकरी देने की घोषणा की थी यद्यपि अब खेल विभाग कह रहा है कि तकनीकी कारणों से सुधा सिंह को यह नौकरी नहीं दी जा सकती।

> सुधा सिंह जैसी संभावनापूर्ण खिलाड़ी की अपने गृह प्रदेश लौटने की अभिलाषा को तकनीकी पेचों में उलझाकर विवाद खड़ा किया जा रहा है

खेल विभाग का यह दृष्टिकोण निराशाजनक है। खेलमंत्री और विभाग के अधिकारियों को हरियाणा सरकार की खेल नीति से सबक सीखना चाहिए जिसके चलते यह छोटा राज्य हर आयोजन में पदकों की झड़ी लगा देता है। खिलाड़ियों को सामान्य अर्हता के आधार पर सरकारी नौकरी नहीं दी जाती। इसके लिए नियम शिथिल किए जाते हैं। सभी राज्य खिलाड़ियों के मामले में तकनीकी आधार किनारे करके फैसला करते हैं। जहां तक सुधा सिंह का सवाल है, वह मध्य रेलवे में अच्छे पद पर सेवायोजित हैं। जाहिर है कि वह खेल निदेशालय में उप निदेशक पद की सिर्फ इसलिए आकांक्षी हैं ताकि वह उत्तर प्रदेश वापस आ सकें। स्टार खिलाड़ियों को नौकरी के बहाने किसी विभाग या संस्था से सम्बद्ध करना गर्व की बात होती है।

**कह के रहेंगे** — माधव जोशी




**जागरण जनमत** — कल का परिणाम

**क्या संकटग्रस्त आइएलएंडएफएस के सरकारी नियंत्रण में आने से उसकी मुश्किलें हल होंगी?**




**आज का सवाल**
क्या स्वच्छ भारत अभियान साफ-सफाई को लेकर जागरूकता का प्रसार करने में सफल रहा है?

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर POLL लिखें, स्पेस देकर Y, N या C लिखकर 57272 पर भेजें
Y –हां, N–नहीं, C–कह नहीं सकते

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।
सभी आंकड़े प्रतिशत में।

# नई करवट लेती राजनीति



**प्रदीप सिंह**

**राजनीति की धुरी अब धीरे-धीरे बदल रही है। नई गोलबंदी में सवर्ण और पिछड़े साथ आ रहे हैं और दलित हाशिये पर जा रहे हैं**

आरक्षण! यह एक ऐसा शब्द है जिसकी ताकत राजनीति और समाज में किसी परमाणु बम से कम नहीं। यह ऐसा मुद्दा है जिस पर देश का कोई नेता, कोई पार्टी या संगठन सौ बार सोचने के बाद भी बोलने से बचता है। पर पिछले कुछ महीनों का घटनाक्रम बताता है कि समय का चक्र घूम रहा है। अचानक ऐसा लगने लगा है कि आरक्षण के मुद्दे पर आक्रामकता दलित वर्ग के लिए राजनीतिक रूप से घाटे का सौदा हो सकती है। अनुसूचित जाति/जनजाति अत्याचार निरोधक कानून पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले और सरकार के उसे उलटने के निर्णय से सामाजिक ध्रुवीकरण की धुरी ही अपनी जगह से खिसक गई है। यह दलित क्रांति की धार को कुंद कर रही है। दलित राजनीति की चैंपियन मायावती ने इस बदलाव को भांप लिया है।

पिछले कुछ महीनों में आरक्षण का मुद्दा एक बार फिर से खबरों में है। आरक्षण के मुद्दे पर देश में एक तरह की आम सहमति है, लेकिन इस आम सहमति के बावजूद कई दल अपने वोट बैंक के अनुसार थोड़ा बहुत समायोजन करते रहते हैं। जैसे समाजवादी पार्टी ने प्रोन्नति में आरक्षण के खुले विरोध का फैसला किया। उसकी वजह उसका वोट बैंक था। दलितों को प्रोन्नति में आरक्षण से पिछड़ों को नुकसान हो रहा था। उससे पहले बिहार में लालू प्रसाद यादव ने कर्पूरी ठाकुर फार्मूले को रद कर दिया, क्योंकि उसकी वजह से यादवों को नुकसान होता। उत्तर प्रदेश में भाजपा ने राजनाथ सिंह के मुख्यमंत्रित्व काल में हुकुम सिंह समिति का गठन करके पिछड़े वर्ग के आरक्षण के कोटे में अति पिछड़ों के लिए अलग आरक्षण का फार्मूला निकाला। इसी तरह की कोशिश इस समय एक बार फिर हो रही है। वजह वही है कि पिछड़ी जातियों में सबसे ज्यादा संख्या वाले यादव भाजपा का वोट बैंक नहीं हैं, जबकि अति पिछड़ी जातियों ने जब भी भाजपा का साथ दिया है, पार्टी को चुनावी कामयाबी मिली है। 2014 के लोकसभा चुनाव और 2017 के उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव में अति पिछड़ों ने भाजपा का भरपूर साथ दिया। 2015 में बिहार विधानसभा चुनाव में अति पिछड़ों ने भाजपा का साथ नहीं दिया तो महागठबंधन की जीत का रास्ता साफ हो गया।

दरअसल राजनीति सामाजिक समीकरण की धुरी बदल रही है। पिछली सदी के आखिरी दो दशकों में बिहार में लालू प्रसाद यादव और उत्तर प्रदेश में मुलायम सिंह यादव युगांतरकारी बदलाव लेकर आए थे। इस बदलाव ने आजादी के बाद से राजनीति और खासतौर से सत्ता पर सवर्णों के वर्चस्व को ध्वस्त कर दिया। समूचे उत्तर भारत में किसी सवर्ण का किसी भी राज्य का मुख्यमंत्री बनना अपवाद जैसा हो गया। उत्तर प्रदेश में पिछले तीन दशक में योगी आदित्यनाथ तीसरे सवर्ण मुख्यमंत्री हैं। बताने की जरूरत नहीं है कि ये तीनों ही मुख्यमंत्री भाजपा ने बनाए, पर बिहार में इन तीन दशकों में एक भी सवर्ण मुख्यमंत्री नहीं बना। दोनों राज्यों की डेमोग्राफी यानी जनसांख्यिकी भी अलग है। बिहार की तुलना में उत्तर प्रदेश में सवर्णों की संख्या काफी ज्यादा है। इस राजनीतिक बदलाव ने सवर्ण जातियों को हाशिये पर धकेल दिया। उसका नतीजा यह हुआ कि जिस पिछड़े वर्ग और दलितों में एकता की बात कपोल कल्पना मानी जाती थी, वह साकार हो गई। 1993 में मुलायम और कांशीराम साथ आ गए। उत्तर प्रदेश की विधानसभा में नारा लगा, मिले मुलायम कांशीराम, हवा हो गए जय श्रीराम। विधानसभा के इतिहास में पहली बार मारपीट हुई और सवर्ण विधायक पिटे, पर यह गठबंधन जमीन पर बेमेल था। इसलिए ज्यादा समय तक चल नहीं पाया, क्योंकि सामाजिक अंतर्विरोधों को लंबे समय तक समायोजित करना आसान नहीं होता। इसकी परिणति गेस्टहाउस कांड के रूप में हुई। इस गठबंधन के टूटने के बाद भी राज्य की राजनीति में सवर्ण हाशिये पर ही रहे। उनके हाथ में नेतृत्व नहीं आया। हां उन्हें दलित या पिछड़े वर्ग के नेता/पार्टी का अनुयायी बनने का अवसर जरूर मिला।


अवधेश राजपूत

अनुसूचित जाति/जनजाति अत्याचार निवारण कानून में सुधार के सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद से देश की राजनीति में बड़ा बदलाव आया है। सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले के बाद दलित संगठनों और राजनीतिक दलों, जिनमें देश के सारे भाजपा विरोधी दल शामिल थे, ने दो अप्रैल को भारत बंद की अपील की। बंद में जगह-जगह हिंसक घटनाएं हुईं। उसके बाद केंद्र सरकार पर ऐसा दबाव बना कि उसके सामने सुप्रीम कोर्ट का फैसला पलटने के अलावा कोई रास्ता नहीं था। वह ऐसा नहीं करती तो उसे भारी राजनीतिक कीमत चुकानी पड़ती, पर सरकार के इस कदम की अप्रत्याशित प्रतिक्रिया एक दूसरे वर्ग से हुई। दशकों से राजनीति के हाशिये पर चल रहा सवर्ण आंदोलित हो गया। पहले विपक्षी दलों ने इसे हवा देने की कोशिश की, पर इस वर्ग ने जब साफ कर दिया कि वह किसी भी पार्टी को वोट नहीं देगा तो सन्नाटा छा गया। मध्य प्रदेश में भाजपा इस संकट से जूझ रही है, लेकिन कांग्रेस के लिए कोई अच्छी खबर नहीं है सिवा इसके कि यह वर्ग बड़ी संख्या में भाजपा को वोट देता रहा है।

बात सवर्णों तक ही रहती तो शायद राजनीतिक दलों की चिंता अपने वोट बैंक के मुताबिक ही होती। पर पिछड़े वर्ग के लोगों का भी दलितों के खिलाफ इस गोलबंदी को मौन समर्थन है। जो कभी भी मुखर समर्थन बन सकता है। मशहूर दार्शनिक रूसो ने कहा था कि 'गुटबाजी नहीं होनी चाहिए, लेकिन यदि हो तो फिर खूब हो।'

अब ऐसा ही होता हुआ दिख रहा है, क्योंकि दलितों के खिलाफ अत्याचार का मामला हो या प्रोन्नति में आरक्षण का, पिछड़ा वर्ग सबसे ज्यादा प्रभावित हो रहा है। इसलिए अब धीरे-धीरे राजनीति की धुरी बदल रही है। नई गोलबंदी में सवर्ण और पिछड़े साथ आ रहे हैं और दलित हाशिये पर जा रहे हैं। यह बात दलित नेताओं को समझ में आ रही है। उसका एक प्रमाण यह है कि प्रोन्नति में आरक्षण बहाल रखने के सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर दलित नेताओं/ संगठनों की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

इस बात को सबसे पहले और अच्छी तरह समझा है, बसपा प्रमुख मायावती ने। दलित पार्टियों और संगठनों को समझ में आ गया है कि पिछली सदी के नौवें दशक का क्रांतिकारी दौर अब नहीं रहा। यही वजह है कि दलितों के खिलाफ अत्याचार के मामले में इलाहाबाद हाईकोर्ट की लखनऊ बेंच के ताजा फैसले पर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। हाईकोर्ट ने कहा है कि जिन धाराओं में गिरफ्तारी होनी है उसमें यदि सात साल से कम की सजा का प्रावधान है तो जांच के बाद ही गिरफ्तारी होगी। इसके अलावा भी गिरफ्तारी के लिए कुछ शर्तें लगाई गई हैं। मायावती समझ रही हैं कि ज्यादा आक्रामक होने से उनका चुनावी जीत का जातीय समीकरण नहीं बन पाएगा। एक दलित संगठन के नेता चंद्रशेखर उर्फ रावण से उनकी दूरी का यही कारण है। वह जानती हैं कि एनजीओ और राजनीतिक दल की प्राथमिकताएं एक जैसी नहीं हो सकतीं। ऐसे में लोकसभा चुनाव आते-आते एक नई सामाजिक गोलबंदी ठोस रूप ले सकती है।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)
**response@jagran.com**

# मुश्किल आर्थिक चुनौतियों का दौर



**राधिका पांडेय**

**किसानों की कर्ज माफी जैसी कवायद पर विराम लगाना ही होगा जो सरकारी खजाने से लेकर बैंकों पर भारी पड़ रही है**




बीते कुछ महीने भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए खासे चुनौतीपूर्ण रहे हैं। इस दौरान कई ऐसे पहलू सामने आए हैं जो देश में ग्रोथ की गाड़ी की रफ्तार सुस्त करने पर आमादा हैं। इस दौरान अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल की कीमतें 80 डॉलर प्रति बैरल तक उछल गईं। इससे चालू खाते के घाटे यानी सीएडी पर दबाव बढ़ गया। उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं की मुद्रा पर पड़ती मार से रुपया भी अछूता नहीं रहा है। वैश्विक घटनाक्रम भी स्थिति को प्रभावित कर रहा है। मसलन अमेरिकी केंद्रीय बैंक फेडरल रिजर्व ने अपनी नीतिगत ब्याज दरों में इजाफा कर दिया है। वहीं अमेरिका अगले कुछ महीनों में ईरान पर कड़े प्रतिबंध लगाने की तैयारी कर रहा है। इस तरह आने वाले दिनों में ये मुश्किलें कुछ वक्त के लिए ऐसे ही कायम रहेंगी। इस बीच कच्चे तेल के बढ़ते दामों को देखते हुए सरकार पर इस बात के लिए दबाव बढ़ा है कि वह पेट्रोलियम उत्पादों पर उत्पाद शुल्क घटाकर आम लोगों को राहत दे, लेकिन अभी तक सरकार ने ऐसा कोई भी कदम न उठाकर यही संकेत दिया है कि वह राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की राह से नहीं भटकने वाली। पिछले वित्त वर्ष में सरकार राजकोषीय घाटे के अपने लक्ष्य से चूक गई थी। इस साल वह राजकोषीय घाटे को जीडीपी के 3.3 प्रतिशत के दायरे में ही समेटने को लेकर प्रतिबद्ध है। सरकार का यह रवैया स्वागतयोग्य है। यह उल्लेखनीय है कि सरकार ने एनके सिंह समिति की रिपोर्ट के आधार पर एक नए राजकोषीय विधायी ढांचे का खाका तैयार किया है। इसमें नया लक्ष्य रखा गया है कि वर्ष 2024-25 तक ऋण-जीडीपी अनुपात को 40 प्रतिशत के स्तर पर लाया जाएगा। ऐसे में राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की राह से तनिक भी विचलन ऋण के अंबार को बढ़ाएगा, जिससे ब्याज का बोझ बढ़ेगा।

चूंकि अगस्त तक ही राजकोषीय घाटे का आंकड़ा चालू वित्त वर्ष के कुल लक्ष्य के 94.7 प्रतिशत के स्तर को छू गया है, ऐसे में बजट लक्ष्य के अनुसार 3.3 प्रतिशत के लक्ष्य को हासिल करने की चुनौतियों को समझना होगा। जहां तेल की कीमतों का असर मुख्य रूप से चालू खाते के घाटे पर ही देखने को मिलेगा तो राजकोषीय मोर्चे पर इसके कुछ अल्पकालिक असर दिख सकते हैं। डीजल और पेट्रोल के दाम अब सरकार द्वारा नहीं तय किए जाते। इन्हें भले ही मूल्य नियंत्रण से मुक्त कर दिया गया है, लेकिन रसोई गैस और केरोसिन की कीमतें अभी भी नियंत्रित की जाती हैं, जिससे राजकोषीय गणित कुछ गड़बड़ा सकता है।

सार्वजनिक उपक्रमों में विनिवेश के जरिये 80,000 करोड़ रुपये जुटाने का लक्ष्य भी फिलहाल दूर की कौड़ी ही लगता है। अगस्त तक विनिवेश के माध्यम से महज 9,424.22 करोड़ रुपये ही जुटाए गए हैं। कर मोर्चे पर भी कुछ चिंता बढ़ी हैं। चालू वित्त वर्ष में अगस्त तक अधिकांश महीनों में जीएसटी संग्रह प्रतिमाह एक लाख करोड़ रुपये के लक्ष्य से कम ही रहा। उपभोक्ता वस्तुओं में बड़े पैमाने पर हुई कटौती से भी जीएसटी से होने वाले राजस्व संग्रह में और कमी आने की आशंका है। हालांकि त्योहारी सीजन में उपभोग में इजाफे की उम्मीद से इस घाटे की कुछ हद तक भरपाई होने की संभावना जताई जा रही है। जहां तक व्यय की बात है तो 14 फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य में हुई बढ़ोतरी राजकोषीय घाटे को बढ़ा सकती है।

ऐसे में आखिर क्या किया जाना चाहिए? सरकार को चाहिए कि वह नवरत्न कंपनियों में अपनी हिस्सेदारी घटाने की योजना बनाए ताकि वह पर्याप्त संसाधन जुटाने में सफल हो सके। जीएसटी के मामले में अब जहां भी अड़चनें कायम हैं उन्हें सुलझाकर इसके सुगम और बेहतर अनुपालन को सुनिश्चित किया जाए। हालांकि केवल केंद्र के राजकोषीय घाटे को साधने से ही सभी समस्याएं नहीं सुलझ जाएंगी। अपने प्रतिस्पर्धी देशों में भारत उन देशों में से एक है जहां सरकारी घाटा काफी ऊंचा है। ऐसे में राज्यों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा भी समीचीन हो जाती है। नए विधायी ढांचे में 2024-25 तक सरकारी घाटे को 60 प्रतिशत के दायरे में लाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसका अर्थ यही है कि राज्यों का ऋण-जीडीपी अनुपात 20 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। इसके लिए जरूरी है कि राज्य भी राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की राह पर मजबूती से टिके रहें। राज्यों की वित्तीय स्थिति को लेकर भारतीय रिजर्व बैंक यानी आरबीआइ की एक ताजा रिपोर्ट इस मोर्चे पर नई चिंताओं को रेखांकित करती है। किसानों की कर्ज माफी से लेकर वेतन आयोग की सिफारिशों ने राज्यों के खजाने में सेंध लगाई है। चालू वित्त वर्ष में राज्यों का राजकोषीय घाटा जीडीपी के 3.1 प्रतिशत के दायरे में रखने का अनुमान लगाया गया है। यह लगातार तीसरा साल होगा जब राज्य राजकोषीय घाटे के उस तीन प्रतिशत की लक्ष्मण रेखा को लांघेंगे जो उनके राजकोषीय कानूनों में खिंची हुई है, जबकि चालू वित्त वर्ष में राज्यों ने अपने राजकोषीय घाटे को जीडीपी के 2.6 प्रतिशत के दायरे में सीमित करने का लक्ष्य तय किया था। मगर इसके लिए किसानों की कर्ज माफी जैसी कवायदों पर विराम लगाना होगा, जो न केवल सरकारी खजाने की सेहत बिगाड़ती हैं, बल्कि बैंकों पर अनावश्यक दबाव बढ़ा देती हैं। राज्यों की वित्तीय स्थिति से जुड़ी रिपोर्ट का एक और महत्वपूर्ण पहलू है और वह यह कि ज्यादा उधारी से ब्याज अदायगी पर बढ़ा खर्च कैसे राजस्व व्यय में इजाफा कर रहा है। राज्यों की उधारी 2014 में 66.2 प्रतिशत से ऊंची छलांग लगाकर 2017 में 76.2 फीसद हो गई। उधारी बढ़ने से राज्यों पर ब्याज का बोझ बढ़ता जा रहा है। यदि बांड बाजार से उधारी की अहमियत बढ़ती है तो फिर बांड बाजार की विसंगतियां दूर करना बेहद जरूरी हो जाता है। इसका एक तरीका तो यही है कि बांड बाजार में अधिक निवेशकों को प्रोत्साहित कर इसमें तरलता के स्तर को सुगम बनाया जाए। केंद्रीय बैंक ने एहतियात के साथ विदेशी निवेशकों को बांड बाजार में भागीदारी की अनुमति दी है। भारत में बांड बाजारों की दशा-दिशा सुधारने के लिए ऐसे सुधारों को बढ़ावा देने की दरकार है।

स्वतंत्र सार्वजनिक ऋण प्रबंधन एजेंसी की स्थापना के रूप में राजकोषीय मोर्चे पर एक और महत्वपूर्ण सुधार आकार लेने की बाट जोह रहा है। ऐसी संस्था के गठन का विचार आगे तो बढ़ा था, लेकिन 2015 के बजट में इसे जगह नहीं मिल पाई। स्वतंत्र ऋण प्रबंधन एजेंसी की भूमिका यही होगी कि वह कम से कम लागत में सरकारी ऋण का प्रबंधन करेगी। जब हम नए राजकोषीय ढांचे की ओर कदम बढ़ा रहे हैं तो इसका भी समय आ गया है कि राजकोषीय अनुशासन और उधारी की लागत घटाने के लिए संस्थागत उपाय भी किए जाएं।

(लेखिका नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक फाइनेंस एंड पॉलिसी में वरिष्ठ अर्थशास्त्री हैं)
**response@jagran.com**

## ऊर्जा

# पाप और पुण्य

पाप-पुण्य के संबंध में यदाकदा प्रश्न उठा करते हैं। विद्वानों का मानना है कि इनकी कोई निश्चित सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। लोगों का विश्वास है कि परिस्थितियां पाप को पुण्य में और पुण्य को पाप में बदल देती हैं। कहां कितना पाप हो रहा है और कितना पुण्य, हम इसका लेखा-जोखा नहीं रखते। याद रहे, पाप से अर्जित धन तो व्यय हो जाता है, लेकिन पाप व्यय नहीं होता। यही बात पुण्य के संबंध में भी लागू होती है। शास्त्र कहते हैं जीव मात्र ही भूल करता है। ऐसा कौन है जो इससे बचा हो? जो इससे पृथक है वह मनुष्य नहीं देवता है, किंतु जो पाप करके प्रायश्चित नहीं करता, वह दानव है। केवल प्रायश्चित से पाप का क्षय नहीं होता। जब तक मनुष्य अज्ञानी है, तब तक नकारात्मक गुण उसमें उपस्थित रहते हैं।

इसलिए तत्व ज्ञान की प्राप्ति आवश्यक है, जिसके अभाव में पाप और वासना नहीं मिटती। ज्ञान प्राप्ति से सभी भेद मिट जाते हैं और व्यक्ति जन-कल्याणकारी कार्य में लग जाता है। इस अनुशासित जीवन के माध्यम से पाप-वासना से मुक्त होकर वह अंतस की पवित्रता से अतीत के पापों से मुक्त हो जाता है, लेकिन इसके लिए प्रभु में निष्कपट विश्वास का रखना जरूरी है। पुण्य प्राप्ति की अगली कड़ी है, भीतरी शत्रुओं को पराजित करने के लिए आत्मज्ञान की उपलब्धि। इससे ही तत्वज्ञान प्राप्त होता है। काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, ईर्ष्या आदि ये छह शत्रु मन को उद्वेलित करते रहते हैं। इनका दमन करने पर मनुष्य दुख और पाप से मुक्त हो जाता है। मन के भीतर झांकते ही प्रभु कृपा से इन शत्रुओं का नाश आरंभ हो जाता है। ईश्वरीय महिमा अनंत है।

इस ब्रह्मांड में मात्र परमात्मा ही अविनाशी और एकाकी है। उनका कोई शत्रु नहीं, केवल मनुष्य ही शत्रुओं से घिरा है। परमात्मा जब भी कुछ करते हैं, प्राणियों के मंगल के ही लिए करते हैं। मनुष्य यह समझ नहीं पाता। भाग्य के प्रतिकूल होने पर मनुष्य प्रभु को अपने प्रतिकूल समझ लेता है, जबकि यह उसका भ्रम होता है। हमें पुण्य प्राप्ति के लिए बस इतना करना है कि हम शास्त्रसम्मत ढंग से जीवनयापन और धनार्जन करते हुए, लोक कल्याणकारी कार्यों में लगे रहें और अपने सभी कर्मों को प्रभु पर आश्रित कर दें। यही पाप मुक्त होने का तरीका है।

डॉ. विश्राम

## पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

### गांधी जी के विचारों की व्यापकता

गांधी के सपनों का भारत शीर्षक के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का लेख पढ़ा। पढ़ने के बाद सात साल के एक बच्चे को अपने माता-पिता के पास जाकर 'हैप्पी गांधी जयंती' कहते हुए भी सुना। बच्चे की इस सहज क्रिया से यह स्पष्ट हो गया कि उसके अवचेतन मस्तिष्क में उस गांधी जी ने जगह बना ली है जिसे जानने और समझने की क्षमता अभी तक तो उसके पास नहीं है, लेकिन उसके उसी मस्तिष्क में भविष्य में गांधी जी को जानने और समझने का बीजारोपण हो चुका है और इसी मायने में विद्यालयों में छुट्टी के बदले गांधी जयंती मनाने की अनिवार्यता महत्वपूर्ण हो जाती है। इस दिन दुनिया में जितने विषय हो सकते हैं उतनी परिचर्चा गांधी जी के विषय में आयोजित की जा सकती है जिसमें स्वच्छता जैसे विषय को एक अभियान का स्वरूप देने का विषय भी शामिल है। यही बच्चा आने वाले समय में गांधी जी की प्रेरणा से किसी विषय को लेकर अपने विचार रखेगा जिस तरह से आज स्वयं प्रधानमंत्री ने उनके स्वच्छता जैसे विचार को व्यापकता प्रदान की है। यही गांधी जी के विचारों की व्यापकता है।

डॉ. हरिप्रसाद राय, आजमगढ़

### किसान आंदोलन

देश भर में किसान पिछले कुछ समय से अपनी मांगों को लेकर धरना - प्रदर्शन कर रहे हैं। आंदोलन के समय सरकार आश्वासन तो देती है, लेकिन उनका कार्यान्वयन ठीक से नहीं होता है, जिससे उनकी समस्याएं हल नहीं हो पा रही हैं। आखिर गन्ने का भुगतान, कर्ज माफी जैसी मांग कहां से गलत है? किसान जब किसी फसल को लगाता है तो छह या साल भर में वह तैयार होती है। पैदावार में उसकी लागत निकालना मुश्किल होता है। दूसरी तरफ कृषि कार्य के लिए लिए गए कर्ज पर बैंक इतना अधिक ब्याज लेते हैं कि वह दिन दूनी रात चौगुनी की गति से बढ़ता जाता है। जब आमदनी मामूली है तो वह कर्ज कहां से अदा करें? यही कारण है कि बहुत से किसान परेशान होकर आत्महत्या करने को विवश होते हैं। सरकार को किसानों की इस समस्या का समाधान करना चाहिए।

मोहम्मद आसिफ, जामिया नगर, दिल्ली

### अन्नदाता की आवाज

लोकतंत्र में हर व्यक्ति को सरकार के सामने अपनी परेशानी रखने का हक है, लेकिन जब हताशा और परेशानी से भरे आंदोलनों का राजनीतिकरण हो जाए तो उसकी मंशा पर भी सवाल उठने लगते हैं। पहले किसान आंदोलन मध्य प्रदेश में हुआ उसके बाद महाराष्ट्र में और अब उप्र में भी आंदोलन के स्वर उठने लगे हैं। किसान देश का अन्नदाता है। इसमें कोई दो राय नहीं कि सीमा पर जवान देश की रक्षा करता है और अन्नदाता देश की भूख मिटाता है। इनकी कोई भी समस्या देश की समस्या होती है। इसे प्राथमिकता से हल किया जाना चाहिए।

दीपक गौतम, सोनीपत

### पाक हुआ बेनकाब

संयुक्त राष्ट्र के 73वें महासभा सत्र को संबोधित करते हुए, विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने पाकिस्तान का असली चेहरा सभी देशों के सामने ला दिया। जबकि पाकिस्तान का रवैया उल्टा चोर कोतवाल को डांटे से कम नहीं था। पाक ने उल्टा भारत पर ही चुनाव के दबाव के कारण उससे बात नहीं करने का आरोप तक लगा दिया। वहीं भारत ने पाक को जवाब देते हुए सच कहा कि ऐसे देश से बात कैसे की जा सकती है जिसने वार्ता के बदले हमारे ही सैनिकों की जान ली हो, जहां आतंकवादी खुले में बेखौफ घूम रहे हों और 26/11का मास्टरमाइंड तक चुनावी प्रक्रिया में बिना रोक टोक के भाग ले रहा हो।

वर्षा यादव, डा.भीमराव आंबेडकर कॉलेज

### दोषपूर्ण शिक्षा नीति

दिल्ली नगर निगम और दिल्ली सरकार के स्कूलों में शिक्षकों के हजारों पद खाली पड़े हैं। गत आठ वर्षों से शिक्षकों का चयन न करने के कारण अनेक युवक-युवतियां आयु की सीमा पार कर चुके हैं और बेरोजगारी के कारण हताशा में जीवन गुजारने को मजबूर हैं। जिस मानसिक कष्ट और अधूरे सपनों की चोट में वे इधर -उधर भटक रहे हैं वह कितनी घातक हो सकती है इस ओर सरकार का कोई ध्यान नहीं है। हैरानी की बात तो यह है कि कोर्ट की बार-बार फटकार के बाद भी संबंधित निकाय बहुत गहरी नींद में हैं। जिन्होंने सीटेट की परीक्षा पास कर रखी है वे भी गत कई वर्षों से घर ही बैठे हैं। सरकार की अनदेखी के कारण जो युवक -युवतियां ओवरएज हो गए हैं उनके लिए दिल्ली सरकार और दिल्ली नगर निगम का दायित्व है कि कम से कम दस वर्ष की आयु में छूट देकर उन्हें तुरंत नियुक्ति पत्र दिए जाएं। बेरोजगार युवा शक्ति की स्थिति इतनी जटिल हो गई है कि उनके भविष्य को ध्यान में रखते हुए केंद्र और दिल्ली सरकार को उन्हें पिछले वर्षों से बेरोजगारी भत्ता भी देना चाहिए। फिलहाल उन्हें जल्द रोजगार दिया जाए।

महेंद्र मान, अलीपुर, दिल्ली

### कांग्रेस का एलान

गांधी जयंती पर कांग्रेस ने वर्धा में मोदी के खिलाफ दूसरे स्वतंत्रता संग्राम का एलान किया है, जबकि भाजपा की मोदी सरकार पहले ही कांग्रेस मुक्त भारत का एलान कर चुकी है। कांग्रेस के 1942 के अंग्रेजो भारत छोड़ो अभियान जिसमें कोई अन्य पार्टी नही थी और देश की स्वतंत्रता के लिए संग्राम शुरू किया था। अब उसने केवल मोदी सरकार के विरुद्ध अभियान छेड़ा है। एक पार्टी कांग्रेस मुक्त भारत चाहती है तो दूसरी मोदी मुक्त भारत। देश की चिंता किसी को नहीं है।

mahesh_nenava@yahoo.com

## ट्वीट-ट्वीट

संयुक्त राष्ट्र का 'चैंपियन ऑफ अर्थ' अवार्ड जीतने पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को बधाई। आप उनसे सहमत हों या न हों, लेकिन उन्होंने मुख्यधारा की राजनीति में साफ-सफाई और स्वच्छता को जगह तो दिलाई है।
भपेंद्र चौबे@bhupendrachaube

मप्र में कांग्रेस के साथ गठजोड़ से मायावती का इन्कार उसके लिए बड़ा झटका है। राजस्थान में इससे बहुत फर्क नहीं पड़ेगा, पर इससे गठबंधन बनाने की राहुल गांधी की क्षमताओं पर भी सवाल उठते हैं। अब यक्ष प्रश्न यही है कि मायावती यूपी में क्या करेंगी?
सुमंत रमन@sumanthraman



विदेशी मेहमानों के साथ कई वर्षों बाद ताजमहल देखने गई तो वहां निराशा हुई कि उत्तर प्रदेश पर्यटन विभाग को इसकी परवाह नहीं। वहां बगीचों का भी ख्याल नहीं रखा जा रहा है। अगर ओबेरॉय अमर विलास ऐसा कर सकता है तो फिर सरकार क्यों नहीं। आखिर इसका जिम्मेदार कौन है?
किरण मजूमदार शॉ@kiranshaw

देश के 46वें मुख्य न्यायाधीश बने जस्टिस रंजन गोगोई को बधाई। वह पहले ऐसे मुख्य न्यायाधीश हैं जिनकी जड़ें पूर्वोत्तर भारत से जुड़ी हैं। उनके दौर में देश त्वरित न्याय और न्यायिक सुधारों की उम्मीद लगाए हुए हैं।
अभिषेक मनु सिंघवी@DrAMSinghvi

## जनपथ

गलबहियां वो मंच की और मधुर मुस्कान,
टिकी न मध्यप्रदेश में और न राजस्थान।
और न राजस्थान खफा हो बैठीं माया,
गठबंधन पर हाय पड़ा दिग्विजयी साया।
बगिया बोय बबूल मिलेगी कैसे छहियां,
है निभना आसान नहीं कोई गलबहियां।

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा जागरण प्रकाशन लि. के लिए डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित एवं 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित, संपादक (दिल्ली एनसीआर) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No 50755/90 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त। वर्ष 29 अंक 79